**ओ३म्**

**‘ईश्वर न्यायकारी व दयालु अवश्य है परन्तु वह कभी किसी का कोई पाप क्षमा नहीं करता’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

ईश्वर कैसा है? इसका सरलतम् व तथ्यपूर्ण उत्तर वेदों व वैदिक शास्त्रों सहित धर्म के यथार्थ रूप के द्रष्टा व प्रचारक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थों में अनेक स्थानों में प्रस्तुत किया है जहां उनके द्वारा प्रस्तुत ईश्वर विषयक गुण, विशेषण व सभी नाम तथ्यपूर्ण एवं परस्पर पूरक हैं, विरोधी नहीं। सत्यार्थ प्रकाश के अन्त में अपने **‘स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश’** में ईश्वर के विषय में वह लिखते हैं कि ईश्वर वह है **‘जिसके ब्रह्म परमात्मादि नाम हैं, जो सच्चिदानन्दादि लक्षणयुक्त है, जिस के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं। जो सर्वज्ञ निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, सर्वशक्तिमान, दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता सब जीवों को कर्मानुसार सत्य न्याय से फलदाता आदि लक्षणयुक्त है, उसी को परमेश्वर मानता हूं।’** यहां ईश्वर के लिए **‘न्यायकारी’** गुण वा नाम का प्रयोग हुआ है तथा उसे सब जीवों को सत्य न्याय से कर्मों का फलदाता आदि लक्षणयुक्त बताया गया है। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के जिस स्वरूप का वर्णन किया है वह वेदों के आधार पर है तथा उसे वेदों से सत्य सिद्ध किया जा सकता है। यदि सृष्टि पर दृष्टि डाले तो यह ईश्वर का स्वरूप सृष्टि में विद्यमान नियमों के अनुसार भी सत्य सिद्ध होता है। यदि हम सच्चिदानन्द शब्द पर ही विचार करें तो यह शब्द सत्य, चित्त तथा आनन्द से मिलकर बना है। यह तीनों गुण ईश्वर में विद्यमान है, यह सच्चिदानन्द शब्द से व्यक्त होता है। सत्य का अर्थ है कि ईश्वर की सत्ता है। ईश्वर का अस्तित्व व सत्ता है, यह कथन बन्ध्या स्त्री के पुत्र के समान कल्पित व असम्भव बात नहीं है। सत्तावान पदार्थ दो प्रकार के होते हैं एक दृश्यमान व दूसरे अदृश्यमान। यह ससार तथा इसमें मनुष्य व प्राणियों के देहादि को हम देखते हैं, यह दृश्य सत्तावान पदार्थ है। आकाश, ईश्वर, जीवात्मा, मूल प्रकृति, वायु में विद्यमान आक्सीजन आदि अनेकानेक गैसें, बहुत दूर और बहुत पास की अनेक वस्तुएं हमें दिखाई नहीं देतीं। यह अदृश्यमान पदार्थ हैं परन्तु इनका अस्तित्व शास्त्र के प्रमाणों तथा युक्ति व तर्क आदि से सिद्ध है।

**eueksgu dqekj vk;Z**

अतः ईश्वर के अदृश्य होने पर भी उसकी सत्ता सत्य है एवं स्वयंसिद्ध है जिसे सृष्टि में होने वाले अपौरुषेय कार्यों के सम्पादन वा लक्षणों से भी जाना जा सकता है। सच्चिदानन्द में दूसरी बात यह है कि ईश्वर चेतन पदार्थ है। इसका अर्थ है कि वह जड़ व निर्जीव पदार्थ नहीं है। जड़ व निर्जीव पदार्थ चेतन जीवों व ईश्वर के प्रयोग व उपयोग के लिए होते हैं। जड़ व निर्जीव पदार्थ सृष्टि में प्रकृति व इसके विकार के रूप में यह दृष्टि जगत व इस पर उपलब्ध पृथिवी, अग्नि, जल, वायु आदि हैं। चेतन पदार्थों के दो मुख्य गुण, ज्ञान व कर्म होते हैं। ईश्वर के चेतन तत्व होने के सहित उसमें अन्य असंख्य गुणों में सर्वज्ञता और सर्वशक्तिमान का गुण भी सम्मिलित है। इन दोनों गुणों के कारण ही उसने यह संसार रचा, इसका पालन करता है व जीवों को उनके शुभाशुभ कर्मानुसार यथावत् सुख व दुःख रूपी कर्म फलों को देता है। इन कार्यों को करने से ईश्वर का स्वरूप चेतन सत्य सिद्ध होता है। ईश्वर का तीसरा गुण उसका आनन्द स्वरुप होना है। ईश्वर आनन्द स्वरूप है, इसका कारण यह है कि ईश्वर सृष्टि का रचयिता, पालक व संहारक है। जिस चेतन पदार्थ में आनन्द व सुख-शान्ति का गुण नहीं होगा वह परहित का कुछ अच्छा कार्य भली प्रकार से नहीं कर सकता। दुःखी व्यक्ति तो दया का अधिकारी होता है। उससे सर्वज्ञता व सर्वशक्तिमत्ता के कार्यों की अपेक्षा नहीं की जा सकती। हम संसार में प्रत्येक क्षण ईश्वर की सर्वज्ञता एवं सर्वशक्तिमत्ता के दर्शन करते हैं। वह सूर्य को बना कर धारण किये हुए है। इसी प्रकार से ब्रह्माण्ड में अन्यान्य असंख्य ग्रह, उपग्रह व अन्य पिण्ड आदि की रचना कर उसका धारण व पोषण कर रहा है और यह सब भी उसकी व्यवस्था का पालन कर रहे हैं या वह पालन करा रहा है। इससे ईश्वर का सृष्टि में सर्वत्र, सर्वव्यापक व आनन्दमय होना सिद्ध होता है। यदि वह आनन्दमय न होता तो सृष्टि की रचना व संचालन न कर सकता। यजुर्वेद के 40/1 मन्त्र में कहा गया है कि **‘ईशा वास्यमिदं सर्वम्’** अर्थात् परमैश्वर्यवान् परमात्मा चराचर जगत में व्यापक है। इससे ईश्वर के अस्तित्व व सत्ता सहित उसका चेतन व आनन्दयुक्त होना ज्ञात होता है। परमैश्वर्यववान चेतन सत्ता ही होती है न कि जड़ सत्ता। और ऐश्वर्य उसी का होता है जो आनन्दमय या आनन्द से युक्त हो। दुःखी व्यक्ति तो दरिद्र ही होता है। इस विवेचन को प्रस्तुत करने का तात्पर्य यह था कि महर्षि दयानन्द वर्णित ईश्वर के गुण, कर्म व स्वभाव आदि सत्य हैं। अब ईश्वर के न्यायकारी स्वरूप पर विचार करते हैं।

 यजुर्वेंद के 40/8 मन्त्र में ईश्वर को **‘पापविद्धम्’** कहा गया है। इसका अर्थ है कि ईश्वर पापाचरण से रहित है। न्याय न करना वा सत्य व न्याय के विरुद्ध आचरण करना पापाचरण होता है और न्याय व इसका आचरण करना धर्माचरण कहा जाता है। ईश्वर सदा सर्वदा तीनों कालों में धर्माचरण करने से न्यायकारी सिद्ध होता है। न्याय क्या है? सत्य का पालन और असत्य का त्याग ही न्याय व धर्म है। सत्याचरण अर्थात् धर्म का आचरण व पालन करने वालों को प्रसन्नता व आनन्द प्रदान करना व पापाचरण वा अधर्माचरण करने वालों दण्डित, कष्ट व दुःख देना न्याय कहलाता है। न्यायालय में क्या होता है? जो व्यक्ति सत्य व सदाचार का पालन करता है, उसे विजयी किया जाता है और जो व्यक्ति असत्य पक्ष का होता है उसकी बात स्वीकार न कर उसे दण्डित किया जाता है। पूरा पूरा न्याय कौन कर सकता है? न्याय वह कर सकता है कि जो सब मनुष्य आदि प्राणियों के सब कार्यों को, भले ही वह रात्रि के अन्धकार में छिप पर कोई करे व दिन के प्रकाश में, उन सब कार्यों का प्रत्यक्षदर्शी वा साक्षी हो। दूसरा जिनका न्याय करता है, उनसे अधिक बलवान व बुद्धिमान हो अर्थात् सर्वज्ञानमय हो। तीसरा न्यायकर्त्ता किंचित पक्षपात करने वाला न हो। पक्षपात करना सत्य को दबाना और असत्य को अनदेखा करना है। जो चेतन सत्ता, मुनष्य वा ईश्वर, सत्य में स्थित होती है वह न तो पक्षपात करती है और किसी के प्रति अन्याय। वह तो सत्य पक्ष को भी न्याय प्रदान करती है और असत्य को दण्ड देकर भी न्याय ही करती है। सत्य को सम्मानित करना और असत्य को अपमानित व दण्डित करना ही न्याय की मांग है। यदि सत्य को अपमानित होना पड़े और असत्य को महिमा से युक्त किया जाए तो यह घोर अन्याय ही होता है और इसे करने वाला दुष्ट ही कहा जा सकता है। न्याय करने वाली सत्ता का निडर, भयरहित व साहसी होना भी आवश्यक है। यह सभी गुण कुछ कुछ मनुष्यों में मिलते हैं परन्तु ईश्वर में इन गुणों की पराकाष्ठा है। अतः ईश्वर पूर्णतया न्यायकारी हो सकता है व वस्तुतः पूर्ण न्यायकारी है भी, इसमें किंचित सन्देह नहीं है। यदि वह न्याय न करे तो यह संसार चल नहीं सकता। इसमें सर्वत्र अव्यवस्था फैल जायेगी और विश्व में सुख व शान्ति कहीं भी देखने को नहीं मिलेगी। विश्व में यत्र तत्र सर्वत्र सुख व शान्ति का होना इस बात का प्रमाण है कि विश्व में सत्य व न्याय विद्यमान है।

 अब प्रश्न होता है कि क्या ईश्वर पापों को क्षमा करता है। वैदिक धर्म से इतर संसार के प्रायः सभी मतों में यह माना जाता है कि ईश्वर पापों को क्षमा करता है। हमारे सामने ऐसा कोई मत व सम्प्रदाय नहीं है जो यह न मानता तो कि ईश्वर पापों को क्षमा नहीं करता? तर्क यह दिया जाता है कि क्योंकि ईश्वर दयालु है, इसलिये वह मनुष्यों व प्राणियों को अपनी उदारता के कारण क्षमा कर देता है। ऐसा होना असम्भव है। दया निर्दोषों के प्रति की जाती है, दोषी प्राणियों के प्रति नहीं। दोषियों को तो दण्ड देना ही दया है। यदि दोषियों पर दया कर उन्हें क्षमा कर दिया जाये तो यह पीडि़तों के प्रति अन्याय हो जायेगा। अतः दोषियों व पापियों को क्षमादान करने को न्याय नहीं कह सकते। यदि ईश्वर ऐसा करेगा तो वह न्यायकारी नहीं अपितु पापियों व अधर्म करने वालों का संरक्षक ही कहा जायेगा। इससे धार्मिक लोग भी पाप करना आरम्भ कर देंगे, इसलिए करेंगे कि उन्हें यह विश्वास होगा कि पाप करके सुख भोगेंगे और क्षमा मांग कर उस पाप के दण्ड से मुक्त हो जायेंगे। यदि ऐसा होता तो सम्भवतः संसार के सभी मनुष्य जमकर पाप करते। सर्वत्र हत्या, चोरी, लूट, असत्य, मारपीट, छीना-झपटी का ही आलम होता। ऐसा नहीं है, इसीलिए पाप करते समय मनुष्य के हृदय में ईश्वर की ओर से भय, शंका व लज्जा उत्पन्न होती है और धर्म व परोपकार के कार्य करने में मन व आत्मा में उत्साह, आनन्द और प्रसन्नता होती है जो कि अन्तर्यामी ईश्वर की ओर से होती है, स्वतः नहीं हो सकता और न ही अन्य कोई बाहरी सत्ता ऐसा कर सकती है। इससे सिद्ध है कि ईश्वर धर्म व सत्य का व्यवहार करने वालों को प्रसन्नता देता है और अधर्म व असत्य का व्यवहार करने वालों को डराता है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के सातवें समुल्लास में प्रश्न किया है कि क्या ईश्वर अपने भक्तों के पाप क्षमा करता है वा नहीं? इसका स्वयं उत्तर देते हुए महर्षि लिखते हैं कि नहीं, ईश्वर किसी के पाप क्षमा नहीं करता। क्योंकि जो ईश्वर पाप क्षमा करे तो उस का न्याय नष्ट हो जाये और सब मनुष्य महापापी हो जायें। इसलिए कि क्षमा की बात सुन कर ही पाप करने वालों को पाप करने में निभर्यता और उत्साह हो जाये। जैसे राजा यदि अपराधियों के अपराध को क्षमा कर दे तो वे उत्साहपूर्वक अधिक अधिक बड़े-बड़े पाप करें। क्योंकि राजा अपना अपराध क्षमा कर देगा और उन को भी भरोसा हो जायेगा कि राजा से हम हाथ जोड़ने आदि चेष्टा कर अपने अपराध छुड़ा लेंगे और जो अपराध नहीं करते वे भी अपराध करने में न डर कर पाप करने में प्रवृत्त हो जायेंगे। इसलिए सब कर्मों का फल यथावत् देना ही ईश्वर का काम है, क्षमा करना नहीं।

 ईश्वर पाप क्षमा नहीं करता इसका उदाहरण प्रकृति में घट रही एक घटना से मिलता है। हर व्यक्ति चाहता है कि वह अधिकतम सुखी हो व उसे कोई दुःख न हो। विचार करने में पता चलता है कि अधिकतम सुख बलवान व स्वस्थ शरीर तथा धन ऐश्वर्य सम्पन्न मनुष्यों को ही मिलता है। अतः यदि ईश्वर पाप क्षमा करता तो सब जीवों को मनुष्यों की श्रेष्ठ योनियां ही मिलनी चाहियें थी। जो मत पाप क्षमा व स्वर्ग आदि को मानते हैं वह सब स्वर्ग में होते, उनको मृत्यु लोक में मनुष्य आदि जन्म लेने की आवश्यकता ही नहीं थी। पाप क्षमा होने पर पशु, पक्षी, कीट व पतंग आदि प्राणी के रूप में तो किसी का जन्म ही न होता क्योंकि यह तो पापों का दण्ड हैं। पाप क्षमा होने पर किसी को कोई रोग व शोक तो कदापि न होता क्योंकि यह सब हमारे बुरे कर्मों के कारण होते हैं। यदि वह बुरे कर्म क्षमा कर दिये जाते तो फिर दुःख व क्लेश का प्रश्न ही पैदा नही होता। क्योंकि मनुष्य व अन्य प्राणियों के रूप में जीवात्मायें विगत लगभग 2 अरबों से जन्म लेती आ रही हैं और दुःख व सुख दोनों भोग रही हैं, अतः सिद्ध है कि किसी व्यक्ति का कोई पाप क्षमा नहीं हुआ व होता है। अतः ईश्वर को न्यायकारी मानकर हमने जो विवेचन किया है, वह सृष्टि में स्पष्ट व मूर्त रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है। लेख को और अधिक विस्तार न देकर हम इसे समाप्त करते हुए कहना चाहते है कि ईश्वर न्यायकारी है, वह किसी भी मनुष्य के किसी भी अशुभ व पाप कर्म को क्षमा नहीं करता। अशुभ व पाप कर्मों के सुख व दुःख रूपी फल तो सब जीवात्माओं को अवश्य ही भोगने हांेगेण् कहा है कि **‘अवश्मेव हि भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।’** कर्मों का फल भोगे बिना कोई बच नहीं सकेगा। अतः यदि दुःखों से बचना है तो कभी कोई अशुभ कर्म न करें अन्यथा जन्म जन्मान्तरों में भटकना व दुःख अवश्यमेव भोगने होंगे।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**